देहलीज़

कालू राम शर्मा

चित्र : श्रिवेन्द्र पांडिया

स्कूल का फ़र्श लगभग वैसा ही खुरदुरा था जैसा बरसों पहले था। फ़र्शियों के बीच की सन्धियाँ धूल से वैसी ही अटी थीं जैसा वह अपने बचपन में उनमें से धूल को उँगलियों की चिमटी में पकड़ बुरबुराकर आड़ी-तिरछी लकीरें खींचता था। बहुत कुछ बदला भी था। सड़क किनारे गुमटियाँ बन चुकी थीं जिनके चलते स्कूल का भवन ढँक चुका था। स्कूल के गेट के बग़ल वाला पेड़ अब विशाल हो चुका था। नदी पर पहले एक रपट थी। रपट के बग़ल में बड़ा-सा पुल बन जाने से रपट जीर्ण-शीर्ण हो चली थी। यह वही रपट थी जहाँ उसका बचपन घण्टों उदास हो सुबकता रहता था। वैसे तो पुल नदी पर आवाजाही के लिए बनाए जाते हैं, लेकिन पुलों का इस्तेमाल बेसहारा लोग पनाह पाने के लिए भी करते हैं। उस नवनिर्मित पुल के नीचे झुग्गियाँ बन चुकी हैं।

शिक्षिका ने चश्मे में से देखा लेकिन पहचान न सकी। कौन होगा? नौजवान ने क़दम बढ़ाए। शिक्षिका से मिलने को बेताब वह नौजवान आगे को बढ़ा। भावुकता उसके रोम-रोम से प्रकट हो रही थी। निकट पहुँचकर शायद उसने अपना नाम बताया होगा। बिजली की गति से शिक्षिका ने उस नौजवान को गले लगा लिया। वे एक दूसरे को देर तक निहारते हुए बातें करते रहे। दूर, बहुत दूर, अतीत के धुँधलके में खो गए।

बरसों पहले शिक्षिका ने उसे गले से लगा गोदी में उठा लिया था। हाथ-पाँव मैले, नाक बह रही थी। वह फटेहाल था। बिखरे बाल। महीनों से नहाया न होगा। हथेली की लकीरें धूल व मिट्टी से भरी हुई हैं। उसे देखकर शिक्षिका ने ऐसा कुछ भी नहीं सोचा और न

ही ऐसा कुछ कहा जो आमतौर पर सुनने को मिलता है। बल्कि जो कहा वह यह कि तुम प्यारे बच्चे हो!

पहली बार उस बालक ने स्कूल की देहलीज़ पर क़दम रखा था। शारीरिक रूप से गन्दा होने के बावजूद भी उस बच्चे में वह शिक्षिका बचपन को महसूस कर सकी थी। शिक्षिका में ममता की लहरें हिलोरे ले रही थीं, तभी तो उसे गले लगाकर गोदी में उठा लिया। शिक्षिका ने जब बालक को गोदी में उठाया तो वह सकपकाया। बालक को यक़ीन नहीं हुआ। प्यार-दुलार उसके शब्दकोश में शायद रहा ही नहीं।

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

नाम में क्या रखा है। नाम राहुल, अमित या अरविन्द या कि नरेन्द्र, अनिल या मुकेश भी हो सकता था। इन नामों के भी कई बच्चे इन्ही हालात में होंगे। शिक्षिका सोचने लगी कि इसका नसीब ऊपर वाले ने तय नहीं किया है। नसीब तो उस बालक की पृष्ठभूमि ने ही तय किया है। अगर किसी बच्चे का जन्म धन्ना सेठानी या कि किसी अधिकारी की पत्नी की कोख से होता तो उसकी जेबों में काजू-किशमिश होते। शरीर व कपड़ों से बेबी क्रीम व टैल्कम पावडर की भीनी-भीनी ख़ुशबू फैलती। मेले से लौटते हुए उसके हाथों में खिलौने होते। वह चमचमाती कार की खिड़की में से झाँक रहा होता और उसकी माँ उसकी परवाह करते हुए कह रही होती, 'बाहर मत झाँको'।

जन्म देने वाली माँ दुनिया में नहीं रही। उसे पता ही नहीं कि माँ भी होती है। सूरज, मुश्किल से ग्यारह महीने का हुआ और उसकी माँ ने दूसरे बच्चे को जन्म देने के दौरान प्राण त्याग दिए। चाहे हम विज्ञान व टैक्नोलॉजी के ढोल पीटते रहें लेकिन इसकी रोशनी सूरज जैसे बच्चों को रोशन नहीं कर सकी। सूरज की माँ इस दुनिया से सूरज के भाई को जन्म देने के तुरन्त बाद ही चल बसी। माँ का पीछा जन्मे उस शिशु ने भी किया। सूरज दुनियावी अँधड़ के थपेड़ों में यहाँ-वहाँ टकराता-भटकता फिरता।

माँ की वंचना ने सूरज की दमक को छीन लिया था। वह तो दरअसल, माँ की वंचना का सबसे बड़ा शिकार हुआ है। ग्यारह महीने की उम्र में माँ का दामन छूट जाए, इसे वंचना का चरम ही कहा जाना लाज़िमी होगा।

वंचना, संसाधनों के अभाव का दूसरा नाम है। सूरज को अगर रोटी, कपड़ा और मकान नसीब होता तो वह इस हाल में नहीं होता। कितना आसानी से कह दिया जाता है कि 'ये तो इसी लायक़ हैं'। दुर्भाग्य से सूरज इसका एक उदाहरण बना था।

नदी के पश्चिमी तट पर एक कस्बा है। उर्ध्वप्रवाह में बसे गाँवों से अपनी पवित्रता को बचाकर नदी कस्बे की सीमा में प्रवेश करती है। बस यहीं से नदी की बर्बादी शुरू होती है। कस्बे की सीमा में प्रवेश कर रही नदी अब पूरी तरह से नाले में परिभाषित हो चुकी है। इसे 'गन्दा नाला' कहा जाता है। गन्दा नाला बन चुकी नदी ने सूरज और उसके जैसों को अपने

किनारे पनाह दी है। लेकिन बरसात के दिनों में बाढ़ अपने किनारे बसे लोगों पर कहर ढाती है।

नदी के पश्चिम की ओर बसे क़स्बे की निवासी शिक्षिका नदी के किनारे स्थित स्कूल में पदस्थ हैं। शिक्षिका ने स्कूल की देहलीज़ पर खड़े बालक को देखा। शिक्षिका ने उसे प्यार से स्कूल के अन्दर आने का इशारा किया। सूरज को पता नहीं कि स्कूल किसलिए होते हैं। वह भटकाव ही था जो शायद सूरज को यहाँ धकेलकर लाया था। स्कूल में वह पढ़ने के लिए तो पक्केतौर पर नहीं आया था। उसने महिला शिक्षिका की नज़रों को भाँपा होगा और उसे यक़ीन हुआ होगा कि स्कूल के अन्दर घुसने में कोई ख़तरा नहीं है।

भटकते हुए जब उसे लोगों की दुत्कार और झिड़कियाँ मिलतीं तो सूरज चिड़ियों, तितलियों और कीड़े-मकोड़ों के पीछे भागता। अचानक उसे रेत के ढेर में एक कुप्पीनुमा गड्ढा दिखाई दिया और वह देखने में मगन हो गया। अरे ये क्या! इस कुप्पीनुमा गड्ढे में तो कोई कीड़ा दुबका हुआ है। उसे बाहर निकालकर अपनी मुट्ठी में बन्द करके चल देता। झाड़ियों में, पत्तियों में इल्लियों को देखता फिरता।

कहते हैं कि देहलीज़ को उलाँघना इंसान के जीवन को बदल देता है। देहलीज़ को उलाँघना किसी को वंचना का शिकार भी बना देता है। या कि देहलीज़ को उलाँघना किसी को वंचना से मुक्ति की राह दिखा देता है। शिक्षिका ने उसके सिर को सहलाया व उसे गोदी में उठा लिया, और बोलीं, "यहाँ रोज़ आया कर।"

"कहाँ रहता है रे?" सूरज ने नज़र मिलाए बग़ैर अपने सिर को महज़ खुजाया। वह बुदबुदाया, "...यहीं पर!" शिक्षिका हँस दीं। इससे अधिक शिक्षिका पूछने का साहस नहीं कर सकीं। शिक्षिका की हँसी में मानो दुलार हो। हँसी में व्यंग्य नहीं था। शिक्षिका ने कहा, "तुम एक अच्छे बच्चे हो!" यह सुन सूरज शिक्षिका की ओर देखने लगा। इतना कहकर उन्होंने उसे बेतरतीब बैठे बच्चों के साथ बैठा दिया व भोजन माता को उसे खाना खिलाने का इशारा किया। सूरज गपागप खाता गया और खाता ही गया। मानो वह कई दिनों-हफ़्तों का भूखा हो। उसने पूरी चार चपातियाँ खा लीं। खाने के बाद उसके चेहरे पर ताज़गी का भाव आया जो अमूमन किसी भी भूखे के चेहरे पर आता है।

शिक्षिका मन ही मन सोचती रहीं– 'माँ के पल्लू से सरककर बच्चा स्कूल में आता है। उसे स्कूल इसीलिए अच्छा नहीं लगता क्योंकि वहाँ माँ का पल्लू नहीं होता। मैं माँ का पल्लू तो नहीं बन सकती लेकिन प्यार तो दे सकती हूँ। उसे अपनापन मिले। यह तो हर बच्चे की ज़रूरत है चाहे वह किसी भी पृष्ठभूमि का हो। मैं बच्चों की दुनिया को शिक्षा से सराबोर तभी कर सकती हूँ जब मैं उन्हें प्यार व दुलार दे सकूँ। दुनिया को बदलने के पहले अपने-आप को बदलना होता है। आप कुछ और हैं और दुनिया को बदलने चल पड़ें, यह सम्भव नहीं।' शिक्षिका अपनी सोच में से बाहर निकल ही रही थीं कि सूरज स्कूल की देहलीज़ को पार कर चुका था। शिक्षिका उसके पीछे गईं, उसे रोका और कुछ कहा।

रोज़ाना ही सूरज स्कूल में आने वाला सबसे पहला बच्चा होता। शायद वह रोज़-रोज़ भूख से मुक्ति के लिए ही स्कूल आने लगा था। सूरज के खाते से उसकी माँ उसके जन्म के ग्यारह महीने के बाद ही चल बसी थी। सूरज की माँ ने दम तोड़ा तो पिता पलायन कर दूर चला गया। उसका किसी को कुछ पता नहीं। अगर बच्चे के सिर से पिता का साया उठ जाए तो वह वंचना उतना कहर नहीं ढाती जितना माँ की वंचना। उसे पता नहीं कि उसकी माँ कैसी थी। उसने सूरज को ग्यारह महीने ज़रूर वह प्यार दिया होगा जो दुनिया की कोई भी माँ अपनी सन्तान को देती है।

शिक्षिका ने सूरज के जीवन को और टटोला तो पाया कि वह अपनी असहाय बूढ़ी दादी के साथ रहता है। पूर्वी तट पर नदी के किनारे एक छप्पर में दादी-पोता रहते हैं। कड़कड़ाती

ठण्ड में एक बार बड़ा-सा काला साँप उसकी झोंपड़ी में घुस आया तो उन दोनों को अँधियारी रात में ही बाहर का रास्ता नापना पड़ा। तब उन दोनों ने पुलिया के नीचे कई रातें गुज़ारीं। जब सूरज चार बरस का हुआ तो दादी ने उसे पेट पालने का तरीक़ा बताया जिसे 'भिक्षावृत्ति' कहा जाता है।

शनिवार की सुबह से ही सूरज, ताँबे के लोटे में एक अण्डाकार-चिकने पत्थर को मीठे तेल में डुबोकर कस्बे के बस स्टैण्ड पर खड़ा हो जाता। 'जय शनि देव'। शनि देव का भय, लोगों को लोटे में सिक्के चढ़ाने को मजबूर करता। पूरे दिन यही क्रम चलता रहता। जैसे ही शनि देव के लोटे में कुछ पैसा आ जाता वह होटल से कचौरी लेता। एक कचौरी को काग़ज़ की पुड़िया बनाकर अपने मैले-कुचेले झोले में रख लेता। दूसरी कचौरी ख़ुद खा लेता। पुड़िया वाली कचौरी को झट से दौड़कर अपनी दादी को दे आता। एक बार उसने अपनी ही झुग्गी के लड़के को कचौरी की पुड़िया दादी को देने के लिए दी थी। वह पुड़िया दादी तक पहुँची ही नहीं। तब से सूरज ने तय कि वह ख़ुद ही दादी को कचौरी देने जाएगा।

शिक्षिका को सूरज के शनि देव वाले क़िस्से की भनक तब चली, जब उन्होंने देखा कि वह शनिवार को स्कूल से ग़ायब रहता है। उन्हें यह बात देर से पकड़ में आई थी। हुआ यह कि शिक्षिका जब हाज़िरी ले रही थीं तो नाम पुकारे गए। 'सूरज' के नाम पर आकर शिक्षिका रुकीं। उन्होंने कक्षा में नज़रें घुमाईं। 'क्यों नहीं आया सूरज आज?' एक लड़की ने चुगली के अन्दाज़ में कहा, "वो तो शनि महाराज माँगने गया है।" शिक्षिका यह सुनकर दिख तो शान्त रही थीं लेकिन अन्दर से वह क्रोधित थीं। उन्हें भिक्षावृत्ति से चिढ़ जो थी– 'आने दो अब सूरज को'।

शनिवार व सोमवार के बीच रविवार आता है। रविवार को सूरज, दक्षिण दिशा में नदी के किनारे देवी के मन्दिर के अहाते में उसी लोटे में देवी को विराजमान करता है। वह ताँबे के लोटे को पुलिया के नीचे डबरे के पानी में मिट्टी से माँज लेता। शनि देव बने उस अण्डाकार चिकने पत्थर को मिट्टी से रगड़कर चिकनाई धो डालता। अब वह लोटे में रखे अण्डाकार पत्थर पर कुमकुम बुरबुरा देता। सड़क के किनारे लगे लाल कनेर का एक फूल तोड़कर उसपर रख देता व मन्दिर में पहुँच जाता। शनि देव नामक अण्डाकार पत्थर सूरज के विवेकी प्रयत्न से देवी में परिवर्तित हो जाता। उसने उस पैटर्न को पकड़ लिया था कि लोगबाग जिन्हें श्रद्धालु कहा जाता है, या तो सुबह-सुबह आते हैं या शाम को आरती के समय। इन दोनों वक़्त के बीच वह यहाँ-वहाँ भटकता रहता।

सोमवार को सूरज स्कूल में आया तो शिक्षिका ने हाज़िरी भरकर उससे बात की। वह उसपर पहले तो झल्लाईं। उन्होंने सूरज को सीधे शब्दों में बोला, "क्यों रे, तू माँगता है! मँगते कहीं के! ये तू क्यों करता है रे?" सूरज के पास कोई जवाब नहीं था। उसे तो इतनाभर पता था कि उसे पैसे मिल जाते हैं। वह बोला, 'नहीं।' शिक्षिका ने झल्लाहट को दरकिनार किया और उसे प्यार से समझाया, "पैसे माँगना कोई अच्छा काम नहीं है। क्यों किसी के सामने हाथ फैलाता है रे?" यह कहते हुए वह रुआँसी हो चलीं। लेकिन उन्होंने सूरज को यह ज़रूर कहा कि तुम एक अच्छे बच्चे हो!

शिक्षिका भारी द्वन्द्व से गुज़र रही थीं। 'अच्छा तेरी दादी के लिए भी स्कूल से ही रोटी ले जाया कर।' शिक्षिका सूरज को हड़काने के बजाय हौसला देने लगी थीं। शिक्षिका को सूरज के इस काम के साथ समझौता करना ही ठीक लगा। मानो उन्होंने उसे मौन सहमति दे दी। हालाँकि वह सहमति न देतीं तो भी अंजाम पता था।

सूरज अब बच्चों में घुलने-मिलने लगा था। उसकी दोस्ती भी होने लगी थी। लेकिन उसकी किताबी पढ़ाई में दिलचस्पी नहीं रहती। वह स्कूल में तरह-तरह के करतब करता। कभी वह किसी झाड़ी में से चिड़िया को पकड़

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

लाता और फिर उसके परों को रंगकर छोड़ देता। कभी वह तितलियों के पीछे 'तितली' बन भागता फिरता। तितली को पकड़ता और फिर उसे उँगलियों की चिमटी में पकड़ता और उससे बातें करता। उसके मैले झोले में किताब-कॉपियों के अलावा रंग-बिरंगे कंकड़-पत्थर, चिड़ियों के पर, नदी के किनारे मिलने वाले छोटे-छोटे शंख व सीपियाँ, कंचे आदि होते। कक्षा में जब शिक्षिका नहीं होतीं तो वह उनको फ़र्श पर बिछा देता। काग़ज़ से हवाई जहाज़ से लगाकर मेंढक व कई तरह के फूल बनाता। पास के खलिहान से ज्वार के सरकण्डों को लाकर उनसे तरह-तरह के खेल-खिलौने बनाना उसका शग़ल था।

एक बार तो सूरज को रंगे हाथों शिक्षिका ने पकड़ ही लिया आख़िर। सूरज और उसके दोस्त कक्षा में आसपास के कंकड़-पत्थर, शंख, चिड़ियों के पर और न जाने क्या-क्या फैलाए बैठे थे। वह यह भी बताए जा रहा था कि फलाँ पर काबर का है और फलाँ कौए का...। शिक्षिका पहले तो दरवाज़े की ओट से यह सब देखती रहीं। आख़िर शिक्षिका अन्दर गईं तो सबकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई।

"ये क्या लगा रखा है?" शिक्षिका का अचानक आना और उस कारगुज़ारी को देखना बच्चों में भय पैदा कर गया। पूरी कक्षा सहम गई। चुप्पी थी कक्षा में। फ़र्श पर फैली चीज़ों को सूरज झटपट समेटने लगा तो शिक्षिका ने कहा, "रुको।" और सूरज के हाथ वहीं थम गए। फ़र्श पर दोनों हाथ टिकाकर बैठा का बैठा ही रह गया सूरज।

"कौन लाया?" डर के मारे कक्षा के बच्चों ने बोल दिया, "सूरज।" सूरज और अधिक सहम गया था।

शिक्षिका की नज़रें फ़र्श पर अटकी की अटकी रह गईं। वह झुकीं और एक-एक चीज़ को देखने लगीं। "वाह! वाह! वाह! क्या बात है रे सूरज!"

सूरज ने एक लम्बी साँस ली। कमरे की दीवारें सूरज द्वारा इकट्ठे किए चिड़ियों के परों, शंख-सीपियों और तमाम चीज़ों से सजा दी गईं। यह सूरज का प्रदर्शन जो था। उसे इस बात की तसल्ली जो थी कि उसने जो भी कुछ इकट्ठा किया था उसे स्कूल में जगह मिली है।

मन्दिर के अहाते में चाँदनी का पेड़ लगा था। उसकी पत्तियों को वह अकसर टटोलता रहता था। बात बरसात के दिनों की है। चाँदनी की पत्तियों को कुतर रही एक बड़ी-सी इल्ली को सूरज पकड़कर स्कूल में ले आया। उसे हाथ में लेकर वह नाच रहा था। दूसरे बच्चे डर रहे थे। सूरज जता रहा था कि वह कितना साहसी है। सूरज बोला, "डरने का नहीं! ये काटती नहीं। देखो! अगर काटती तो मेको बी काटती। देखो, ये तो भोत सीदी है।" बच्चों का डर कम

होता जा रहा था। उसने दोस्तों से कहा, "चलो रे, अपन इल्ली को पालते हैं।" उसने बच्चों से कहा कि इल्ली को पालेंगे तो वो तितली बनेगी।

वह झट से एक ख़ाली खोखा ले आया। खोखे में इल्ली को रख दिया। उसमें चाँदनी की पत्तियाँ तोड़कर डाल दी गईं। सूरज ने भटकाव के दौरान कई तरह की इल्लियाँ देखी थीं। चाँदनी के पेड़ पर इल्ली का सूरज को दिखना उसके भटकाव के दौरान मिली नज़रों का ही नतीजा था। सूरज ने चेताया कि इल्ली को कोई भी ज़ोर से नहीं दबाएगा वरना इसका कचूमर बन जाएगा। सूरज रोज़ इल्ली को देखता। वह रोज़ाना याद से ताज़ी पत्तियाँ इल्ली के लिए लाता और उस डिब्बे में रखता। इल्ली को सहलाता और फिर अपने काम में लग जाता।

एक दिन सूरज ने खोखे को खोला और उसमें से उँगलियों की चिमटी में फड़फड़ाती तितली को निकाला। बच्चों की ख़ुशियाँ हिलोरे लेने लगीं। उसने गीत-सा गाया– 'इल्ली बन गई तितली रे...।' और फिर क्या था! शिक्षिका भी गीत में शामिल हो गईं। सूरज यहाँ-वहाँ से कई सारी चीज़ों को इकट्ठा करके स्कूल में लाता रहता। सूरज नारियल की नरेटियों को इकट्ठा कर उनमें छेद करता और गर्मी के दिनों में पेड़ की डालियों पर बाँधकर उनमें पानी भर देता। चिड़ियाँ पानी पीने को आतीं। सूरज के रहते हुए यह स्कूल का एक खेल बन चुका था। एक दिन सूरज घायल बुलबुल को स्कूल में ले आया कि शायद उसे बचा सके। कमरे में एक बड़े से खोखे में दाना-पानी रखकर घायल बुलबुल को छोड़ दिया। अगले दिन वह ठीक हो गई और उसने उसे उड़ा दिया।

शिक्षिका सूरज का ख़्याल अधिक रखतीं। इस बात का भान सूरज को था। साल-दर-साल बीतते गए। अब सूरज के उड़ने का वक़्त आ चुका था। उसे स्कूल की देहलीज़ को फिर से लाँघना था। सूरज की जीवनरूपी पतंग अब हवा में थमती दिख रही थी। स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद सूरज शहर को चला गया।

सूरज बरसों बाद शिक्षिका से मिलने को आया था। देर तक दोनों अतीत में खोए रहे। नौजवान सूरज के सिर पर शिक्षिका हाथ फेरते हुए बोलीं, "तुम प्यारे बच्चे थे!"

कालू राम शर्मा ने लगभग तीन दशक तक शैक्षिक संस्था एकलव्य और विद्या भवन सोसायटी के साथ काम किया है। वे विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा, विज्ञान, पर्यावरण और सामाजिक सरोकारों के विषयों पर निरन्तर लिखते रहते हैं। आपने *बुनियादी शिक्षा : एक नई कोशिश* व *खोजबीन* पत्रिकाओं का सम्पादन किया है। आपकी कई पुस्तकें प्रकाशित हैं जिनमें *खोजबीन का आनन्द, अण्डे ही अण्डे, छोटे जीवों से जान पहचान* और नव साक्षरों के लिए लिखी किताबें प्रमुख हैं। विगत 9 वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में काम कर रहे हैं।

सम्पर्क : kr.sharma@azimpremjifoundation.org